महात्मा गाँधी की धर्म-संबंधी अवधारणा

महात्मा गाँधी धर्मनिष्ठ हिन्दू हैं। वेद, उपनिषद् और गीता के धर्म दर्शन में उनका दृढ़ विश्वास है। किन्तु उन्होंने देखा कि कालक्रम में हिन्दूधर्म का निम्न कोटि की अवस्था में पतन हो गया है। उसके अनुयायी भी उपनिषदीय दर्शन के वास्तविक अभिप्राय को विस्मृत कर चुके हैं। पुरोहितों ने प्रथा, भेद तथा अलगाव की दीवारों का निर्माण कर दिया जिससे हिन्दू धर्म, गतिहीन और मृत हो गया है। अतएव हिन्दू धर्म का पुनर्जीवन आवश्यक है।

महात्मा गाँधी के अनुसार हिन्दू धर्म सम्प्रदायवादी तथा संकीर्ण नहीं है। यदि वह अपने दरवाज़े बन्द कर लेता है, तथा अन्य धर्मों के साथ सम्पर्क की उपेक्षा करता है तो वह निश्चित रूप से नष्ट हो जाएगा। यदि किसी धर्म को जीवित रहना है तो उसे अवश्य ही उदार एवं गतिशील रहना चाहिए। वह लिखते हैं, "धर्म से मेरा तात्पर्य इसका बाह्य रूप या परम्परागत धर्म नहीं है अपितु वह धर्म है जो सभी धर्मों में अन्तर्निहित है, जो हमें हमारे स्रष्टा के सम्मुख लाता है।"[1]

सच्चा धर्म औपचारिक धर्मों से उच्चतर है। वह मानव प्रकृति को रूपान्तरित कर देता है एवं मनुष्य को ईश्वर के साथ संयुक्त करता है। वह मनुष्यों का नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक रूपान्तर कर देता है एवं ईश्वर या सत्य के साथ समागम के लिए उन्मुख कर देता है। महात्मा गाँधी कहते हैं, "मुझे स्पष्ट करने दो कि धर्म से मेरा क्या अभिप्राय है। यह वह हिन्दू धर्म नहीं है, जिसे मैं निश्चित रूप से अन्य दूसरे धर्मों से अधिक मूल्य-

---

१. जे० जे० डॉक : एम० के० गाँधी, प्रथम संस्करण, १९०९, पृष्ठ-७.

Scanned by TapScanner

वान् समझता हूँ, किन्तु यह वह धर्म है, जो हिन्दू धर्म से अधिक श्रेष्ठ है, जो व्यक्ति के प्रकृति को परिवर्तित कर देता है, जो सदा पवित्र करता है। यह मानवीय प्रकृति का स्थायी तत्त्व है जो पूर्ण अभिव्यक्ति प्राप्त करने के लिए किसी भी क़ीमत को अधिक नहीं मानता है, और जो आत्मा को तब तक सम्पूर्णतः व्याकुल कर देता है, जब तक वह स्वयं को नहीं प्राप्त कर लेता, अपने स्रष्टा को नहीं जान लेता एवं परमेश्वर और अपने बीच वास्तविक संपर्क नहीं स्थापित कर लेता है।"[1]

हिन्दू धर्म सतत् विकासशील धर्म है। यह अपने में अनेक धर्मों को समाहित करता है। अपने सार्वभौम स्परूप में वह विभिन्न धर्मों के सभी पैग़म्बरों की पूजा को अपनाता है। इसमें अनेक धार्मिक विश्वास समाविष्ट हैं। शाक, सीथियन, हूण, इत्यादि, के धर्म बहुत समय पहले ही हिन्दूधर्म में आत्मसात् हो चुके हैं। यह मनुष्यों के पृथक्-पृथक् विश्वासों के अनुसार उन्हें विभिन्न देवताओं की उपासना करने की अनुमति भी प्रदान करता है। महात्मा गाँधी कहते हैं, "हिन्दू धर्म अलगाववादी धर्म नहीं है। उसमें संसार के सभी पैग़म्बरों की पूजा के लिए स्थान है। वह सामान्य अर्थ में धर्म नहीं है। उसने अपने में अनेक जनजातियों को समाहित कर लिया है, यह उसका विकासवादी स्वभाव नैसर्गिक है। हिन्दू धर्म प्रत्येक व्यक्ति को अपने धर्म के अनुसार ईश्वर की पूजा करने के लिए आग्रह करता है। उसका सभी धर्मों के साथ मित्रता रहती है।"[2]

महात्मा गाँधी ने अनेक धर्म ग्रन्थों का गहरा अध्ययन किया और वह इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि सभी धर्मों में अनिवार्य रूप से एकता है। यदि कोई मनुष्य वास्तव में धार्मिक है, तो उसके लिए सभी धर्म समान रूप से आध्यात्मिक हैं। सच्चे हिन्दू के रूप में, उन्हें ईसाई, इस्लाम और पारसी धर्मों के प्रमुख सिद्धान्तों को स्वीकार करने में कोई हिचक नहीं हुई। महात्मा गाँधी का नवीन प्रगतिशील हिन्दू धर्म सभी धर्मों की समन्वित एकता है। उन्होंने विभिन्न धर्मों से प्राप्त सत्यों से हिन्दू धर्म को समृद्ध किया। हिन्दू धर्म का क्षेत्र विस्तृत है। यह धर्मों के सर्वोत्तम शिक्षाओं को समाविष्ट करता है। महात्मा गाँधी कहते हैं, "एक कट्टर हिन्दू होने के बावजूद, मैं अपनी निष्ठा में ईसाई, इस्लाम और पारसी उपदेशों के लिए समुचित स्थान पाता हूँ।

Scanned by TapScanner

इसलिये मेरा हिन्दू धर्म कुछ लोगों को एक मिश्रित धर्म प्रतीत होता है तथा कुछ ने मुझे 'धर्म सार संग्रही' की उपाधि दी है।"[1]

महात्मा गाँधी का विचार है कि हिन्दू या अन्य धर्म सिर्फ़ आंशिक रूप से ही सत्य हैं। मनुष्य जन्म से ही अपूर्ण तथा अज्ञानी है। उसे पूर्ण ज्ञान नहीं प्राप्त होता है। वह वास्तविक एवं पूर्ण धर्म का विकास नहीं कर सकता है। मनुष्य जितना ही अधिक पूर्ण, पवित्र, उत्कृष्ट तथा आध्यात्मिक होता है, उतना ही वह उच्चत्तर धर्म का विकास करता है। किन्तु मानव ने अभी तक ईश्वर के साथ तादात्म्य नहीं प्राप्त किया है और इसलिए वर्तमान समय में ऐसा कोई धर्म नहीं है जिसे पूर्ण एवं श्रेष्ठ कहा जा सकता है। महात्मा गाँधी कहते है, "सिर्फ़ अन्वेषक होने के कारण हम अपनी खोज में लगे रहते हैं, किन्तु हमें अपनी अपूर्णता का ज्ञान रहता है। यदि हम स्वयं अपूर्ण है, तो हमारे द्वारा परिकल्पित धर्म को भी अवश्य अपूर्ण होना चाहिए। हमने धर्म का उसकी सम्पूर्णता में ज्ञान नहीं प्राप्त किया है, जिस प्रकार हमने ईश्वर का ज्ञान नहीं प्राप्त किया है। हमारे विचार में सभी धर्म, इस तरह अपूर्ण होने के कारण, सदैव विकास तथा पूनर्व्याख्या का विषय है। सत्य एवं ईश्वर की ओर अग्रसर होना सिर्फ़ ऐसे विकास के कारण ही संभव है।"[2]

धर्म तथा नैतिकता

नीतिशास्त्र का धर्म में केन्द्रीय स्थान है। धर्म, व्यक्ति के द्वारा कर्त्तव्यों के नैतिक सम्पादन में निहित है। ज्योंहि धार्मिक सिद्धान्त अपना नैतिक आधार त्याग देते हैं, वे धार्मिक नहीं रह जाते हैं। धर्म को हमारी प्रतिदिन की समस्याओं का समाधान करना चाहिए और उसे जीवन के सभी कार्यों में हमारा मार्ग दर्शन करना चाहिए। महात्मा गाँधी के अनुसार, धर्म अस्पृश्यता—उन्मूलन, गरीबों के लिए चरखे पर सूत कातने तथा खादी के कपड़े पहनने में निहित है। धर्म में मानव जाति के प्रति समर्पित सेवा भी शामिल है।

मानव की सेवा करना ईश्वर की सेवा करना है। "धार्मिक मनुष्य का प्रत्येक कार्य उसके धर्म से नि:सृत होना चाहिए, क्योंकि धर्म का तात्पर्य ईश्वर से संयुक्त होना है; अर्थात् ईश्वर हमारे श्वास पर भी नियंत्रण रखता है।"[3]

Scanned by TapScanner

महात्मा गाँधी के अनुसार, राजनीति में उनके सभी कार्य धार्मिक है। वे मानव सेवा के लिए राजनीति में सम्मिलित हुए। चुँकि वे राजनीति में प्रवेश किए बिना जनता की सहायता तथा उनका सुधार नहीं कर सकते थे, इसलिए वे इसमें लिप्त हुए। सिर्फ़ राजनीति के द्वारा ही वह बड़े पैमाने में जनता का कल्याण करने में समर्थ हो सके, जिसे कि वह तटस्थ रहकर नहीं कर सकते थे। वह कहते हैं, "तथ्य यह है कि जब मैंने देखा कि मेरे सामाजिक कार्य, राजनीतिक कार्य के बिना सम्भव नहीं होंगे, तब मैंने राजनीति को अपनाया, और सिर्फ़ उसी सीमा तक अपनाया जहाँ तक उसने सामाजिक कार्य को धारण रखा। अतएव, मुझे यह अवश्य स्वीकार करना चाहिए कि सामाजिक सुधार या आत्म-शुद्धि का कार्य मुझे उसकी अपेक्षा, जिसे मात्र राजनीतिक कार्य कहा जाता है, सैकड़ों गुना अधिक प्रिय है।"[1]

महात्मा गाँधी ने अपने राजनीतिक कार्यों को प्रेम और मानव सेवा के धार्मिक सिद्धान्तों पर आधारित किया। उनके जीवन का लक्ष्य भारतीय जनता और उनके द्वारा, स्वतंत्र रूप से पूरे विश्व में, नैतिक तथा सामाजिक मूल्यों को पुनर्योजित करना है। उनके अनुसार, अहिंसा एक धार्मिक सिद्धान्त है। हमें सभी कठिनाइयों में भी इस पर दृढ़ रहना चाहिए। अहिंसा के चतुर्दिक प्रयोग में सभी धार्मिक सिद्धान्त, प्रेम, समानता, न्याय, सत्य, समाज सेवा, और ईश्वर में आस्था समाहित है। धर्म और नैतिकता सदैव एक साथ रहते हैं। अहिंसा आत्म-ज्ञान का नैतिक-धार्मिक मार्ग है। अन्य योगों के साथ महात्मा गाँधी अहिंसा-योग, प्रेम के नैतिक मार्ग, को भी जोड़ देते हैं, जिससे सत्य या ईश्वर की प्राप्ति प्रत्येक व्यक्ति को सुलभ हो सके।

Scanned by TapScanner